विषय-सूची

		धारा	पृष्ठ
	भूमिका		
	शुद्धिपत्र		
प्रथम खण्ड—			
	विषय प्रवेश—	१-५३	१-६२
(अ)	नवभारत का अर्थ—भारत के पुनरुद्धार की रूप-रेखा, भारतीय अर्थ शास्त्र के अध्ययन और विवेचन में नये लक्षणों का प्रयोग।	१–२	३–५
(ब)	नवभारत की आवश्यकता—व्यावहारिक ढंग से आगे बढ़ने का साधन, शोषणात्मक प्रवृत्तियों के स्थान में रचनात्मक भाव धारा।	३–४	५–६
(स)	नवभारत का आर्थिकदृष्टि-कोण — नरभक्षी कङ्काल को दूर करने का आर्थिक आयोजन, उन्नति और उत्थान की दौड़ में सब के लिए सुख-सम्पदा का समान अवसर, दयनीय दुरंगी, भारतीय अर्थ-शास्त्र का मौलिक आधार, भारतीय अर्थ-शास्त्र को समझने के लिए उसके समाज शास्त्र को समझना होगा—किसी देश का आर्थिक स्वरूप उसकी भौगोलिक स्थिति पर निर्भर है, भारतीय सभ्यता ग्राम्य प्रधान है, मुद्रा-नीति और वस्तु-विनिमय, दूषित विनिमय विधान का परिणाम, मुद्रा का स्थायित्व और संसार की व्यवस्था, मुद्रा-नीति (Money Economy) का परित्याग आवश्यक है।	४–६	६–१३
(द)	नव-भारत का रचनात्मक आधार—संसार की शोचनीय दशा, हमारे कार्य-क्रम का ढंग बदल गया है, अब कारी-गर मनुष्य नहीं, कल का पुर्जा मात्र है, मनुष्य है, पर अधूरा। स्वार्थ मनुष्य का एक निश्चित स्वभाव बन गया है, चतुर्दिक बेकारी, मशीनों का यह सब केवल वाह्य		

धारा पृष्ठ

प्रभाव है, हमारा रोज का शौक जिंदगी की आदत फिर आवश्यकताओं में बदल जाता है, मशीनें मनुष्य को कृत्रिम बना रही हैं, व्यक्ति का प्राकृतिक सहयोग, संसार की दुर्दशा केवल पेट न भरने से ही नहीं, कारखानों की बढ़ती से बेकारी और दरिद्रता, मनुष्य को अपनी रूप-रेखा मशीनों के अनुसार बनाने पर विवश होना पड़ता है, मशीनें मनुष्य के अस्तित्व और व्यक्तित्व दोनों को निर्मूल बना रही हैं, उत्पादन और वितरण के नैसर्गिक उपाय, जनन-निग्रह और पापाचार, वर्तमान अर्थ-विधान पर शंका, स्वयंभू अनुशासन, चर्खे का अर्थ, कलयुग की विशेषताएँ, कलमयी उत्पादन और पूँजी का घनोत्तर एकत्रीकरण, कलमयी उत्पादन का उद्भूत सङ्कट कैसे दूर हो ! कलमयी उत्पादन का दुःखद काकपक्ष, बलात् अभाव के साथ बलात् बेकारी, पूँजीवादी दृष्टिकोण, कलमयी बाहुल्य के मध्य निरीहता और भूख की पाशविक लीलाएँ, समाजवादी दृष्टिकोण, श्रम और विश्राम का आर्थिक और तार्किक अनुपात, मार्क्सवाद और पूँजीवाद, दोनों निराधार हैं, चर्खात्मक मशीनें, कृत्रिम साम्य असम्भव है, चर्खात्मक उत्पादन, सामूहिक उपज से बचना ही नवभारत का लक्ष्य, कलमयी स्थिति में समाज से स्वामी और दास की सत्ता मिट ही नहीं सकती, कारखानों का अर्थ, "एक मनुष्यात्मक उद्योग व्यवस्था" मशीनों का आकार (बनावट), कलमयी सभ्यता, शत-प्रति-शत रोजी, समूह और समाज, वर्तमान उत्पादन गलत लोग गलत स्थान पर कर रहे हैं, निःकल उत्पादन का राजनीतिक अंग, वर्ग भेद का अभाव, पुलिस और सेना, लक्ष्य के सम्पूर्ण चित्र की आवश्यकता, "ए० म० उ० व्य०।" १०-३६ १३-४५

(य) नवभारत का विषयाधार — ऐतिहासिक निष्कर्ष तथा सैद्धांतिक अनुसन्धान ही नवभारत का विषयाधार है, आङ्कड़ों का यथार्थ महत्व, प्रत्यक्ष सत्य और निर्जीव तत्व। ३७-३८ ४५-४६

धारा पृष्ठ

(र) नवभारत का भौगोलिक अर्थ—आर्थिक परिस्थिति सामाजिक ढांचे की जननी, भौगोलिक प्राधान्य, भौतिक प्राचुर्य्य का सांस्कृतिक प्रभाव, नवभारत की तथा अन्य योजनाओं में एक भौगोलिक सत्य का अंतर है, भारत की भौगोलिक विशेषता, भारत की प्राकृतिक देन, विदेशी विचारों का प्रयोग और दुष्परिणाम, भारत की भौमिक बनावट, भारतीय स्थिति का व्यापारी महत्व, भारत को अपने ही वितरण विधान की आवश्यकता। ३६–४८ ४९–५७

(ल) नवभारत का विषय प्रतिपादन—अर्थ शास्त्र की शुद्ध और व्यावहारिक रूप-रेखा, इने-गिने अर्थ शास्त्रियों द्वारा भारत का कल्याण असम्भव, निश्चित नीति और स्पष्ट प्रणाली, शाश्वत सिद्धांतों के आधार पर सनातन विधान की रचना, नवीन और प्राचीन का सुसाम्य। ४६–५३ ५८–६२

द्वितीय खण्ड—

नारी— १–६० ६३–९२

(अ) दम्पति और समाज—नारी मानव जीवन की क्रियात्मक शक्ति, मानव सम्बन्ध के प्रारम्भिक रूप में परिवर्तन, दम्पति समाज का आदि कारण और अङ्ग, मनुष्य की प्रारम्भिक दशा, दाम्पत्य का विकास अनिवार्य है, 'बे–रोक–टोक' प्रथा गृहस्थाश्रम के बिना सामाजिक विकास असम्भव, 'बहु-पति' विधान, सुन्दर गृहस्थाश्रम के बिना समाज सुसभ्य नहीं होता, 'बहु-पत्नि' विधान, पुत्र की आवश्यकता से 'बहु-पत्नि' विधान को उत्तेजना, 'बहु-पति' से 'बहु-पत्नि' विधान श्रेष्ठ है, 'बहु-पत्नि' के दोष, 'एक-पति' विधान और आर्य, 'एक–व्रत' विधान की श्रेष्ठता। १–१७ ६३–७२

धारा पृष्ठ

(ब) नारी और सामाजिक विकास—समाज-चक्र, समाज संघटन में पुरुष का प्रामुख्य, स्त्री-पुरुष का शारीरिक भेद और स्त्रियों की दासता, नर-नारी समझौता, विवाह विधान और पातिव्रत, सन्तान की ममता बिना जाति की सुरक्षा असम्भव, स्त्री-पुरुष का भेद, 'अपिण्ड-अगोत्र' और 'सपिण्ड-सगोत्र' पद्धतियाँ, पुरुषों द्वारा स्त्री पर आक्रमण, 'सपिण्ड-सगोत्र' 'अपिण्ड-अगोत्र ।' १८–३७ ७२–७८

(स) श्रम विभाजन और गार्हस्थ्य—गार्हस्थ्य जीवन का श्रीगणेश, स्त्री-पुरुष के सहयोग पूर्ण कार्य की आवश्यकता, जीवन संघर्ष की दौड़ में स्त्री और पुरुष का अन्तर, स्त्री और पुरुष के सहयोग का मूल कारण, सती और सद्गृहस्थ, शान्ति और स्थिरता बिना गृहस्थाश्रम असंभव, गृहस्थाश्रमों के एकीकरण से राष्ट्र निर्माण, स्त्री-पुरुष का श्रम समझौता, समाज के श्रम विभाजन का बीजारोपण, स्त्री-पुरुष का सच्चा सहयोग, समाज की सम्पदा में स्त्री-पुरुष । ३८–५० ७८–८५

(द) गार्हस्थ्य और सम्पत्ति—मनुष्य की साम्पत्तिक ममता और समाज का स्थायित्व, संगठित व्यवस्था का सूत्राधार श्रम विभाजन में छिपा है, सामूहिक सुख की आवश्यकताएं, कार्य विभाजन का आकारात्मक और उद्यमस्थ आधार, श्रम विभाजन बिना साम्पत्तिक निर्माण असम्भव, समय और शक्ति का सम्मिलित सदुपयोग वस्तु-पदार्थ को सञ्चित रूप देता है, सामाजिक और राष्ट्रीय विकास में प्रत्येक व्यक्ति का श्रम और सहयोग, उत्पादक श्रम के लिए गृहस्थाश्रम, मशीनें, स्त्री-पुरुष के सम्बन्ध पर कलमयता का प्रभाव, उत्पादन' क्षेत्र गृहस्थाश्रम से उठकर कारखानों में, गृहस्थाश्रम सम्पत्ति नहीं दुःख का केन्द्र । ५१–६० ८५–९१

धारा पृष्ठ

तृतीय खण्ड—

समाज— १–१४३ ९३–२१५

(अ) व्यक्ति और समूह—व्यक्ति के मौलिक स्वरूप को समझने की आवश्यकता, मनुष्य क्या है (युनानी दर्शन) संसार-सृष्टि का विहंगम दृश्य, आत्मा व चेतना, मार्क्सवाद, मूल प्रकृति का द्वन्द्वात्मक खेल, सृष्टि की स्वभाव सिद्ध परिवर्तन शीलता को सुख साध्य कैसे बनाया जाय, जड़ और चेतन विषयक विचार धाराएँ, मनुष्य एक सामाजिक जीव है। १-८ ९५-९९

(ब) समाज (शहर और ग्राम्य)—विश्व के अर्थ विधान का वर्गीकरण और विवेचन, भारतीय सभ्यता अमिट है, समाज संगठन का आधार, संघटित दल में कार्य करना मनुष्य के लिए अनिवार्य, केन्द्रीकरण कारखानों का अनिवार्य फल, उत्पादन का साधन मिल मालिकों के हाथ में, मनुष्य समाज मशीनों का गुलाम, पवित्र और सरल जीवन ही सुख-सम्पदा का द्योतक है, मशीनों की आवश्यकता, शहरी समाज की विशेषता, कारखानों का लक्ष्य, ग्राम्य-सभ्यता की विशेषता, विकास के लिए ग्राम्य सभ्यता की विशेषता, विकास के लिए ग्राम्य सभ्यता अनिवार्य, भारतीय संस्कृति का आधार, सम्मिलित परिवार पद्धति, वर्ण व्यवस्था द्वारा कार्य विभाजन, पञ्चायत की देखरेख में प्रजा सत्तात्मक राज, आध्यात्मिक विकास, पाश्चात्य का आर्थिक संघटन, अर्वाचीन आर्थिक पद्धतियों का विश्लेषण, एक सामान्य रोग, पूँजीवाद, स्वदेशी का आदर्श, "वसुधैव कुटुम्बकम् ," भारतीय ग्रामोद्योग का लक्ष्य, समाज का सामूहिक संघटन। ९–२७ १००–१११

(स) भारतीय समाज का आधारात्मक तत्व—स्वार्थ-सिद्धि और जीवन-लक्ष्य, उत्पादन और सामूहिक सुख, अर्वाचीन विचारधारा, डा० ग्रेगरी का मत (जनाधिक्य), मानव जीवन के चार प्राकृतिक भाग, प्राचीन भारतीय सभ्यता,

धारा । पृष्ठ

समाज के आर्थिक जीवन का उत्तर दायित्व व्यक्ति के नैतिक जीवन पर अवलम्बित है । २८–३४ ११२–११६

(द) सहयोग या संघर्ष—सृष्टि की परिवर्तन शीलता और समाज, द्वन्द्वात्मक सिद्धांत, विकास के लिए पारस्परिक सहयोग, व्यक्तिगत स्वार्थ और सामाजिक विकास, समुदायों का अंतर्संघर्ष, समाज की स्वयंभू नियमन शक्ति में हस्तक्षेप, महाभारत और विषमता, समाज की पराकाष्ठा, संत्रटित और व्यवस्थित समाज । ३५–४४ ११७–१२५

(य) श्रम और कार्य—श्रम और विश्राम का पारस्परिक सम्बन्ध, हमारे कार्यों का उद्देश्य, जीवन विकास के लिए अवकाश, अत्यधिक बेकारी, प्राचीन कार्यशैली, वर्तमान कलमयी कार्य का फल, श्रम का आधार, कार्य क्षेत्र की विभिन्नता, पारिवारिक व्यवस्था तथा सामाजिक उत्तर दायित्व, चर्खे की सर्वव्यापकता, सामाजिक श्रम का विश्लेषण, विभिन्न श्रमिक गण, ग्राम्य-प्रधान श्रम-विधान, श्रम-काल का विभिन्न माप दण्ड, ग्राम्य-प्रधान श्रम का फल, 'श्रम और कार्य' तथा श्रम-विभाग रूप चातुर्वर्ण्य व्यवस्था, ऊँच-नीच के भाव से सामाजिक वैषम्य, समाज-च्युत के लक्षण, समाज और सामूहिक सहयोग, वर्ण-व्यवस्था और शिक्षण, वर्ण-व्यवस्थात्मक कार्य प्रणाली, वर्ण-व्यवस्थात्मक विभेद, 'जन्मना और कर्मणा', हास्यास्पद परिस्थिति, कर्तव्य युक्त जन्मना वर्ण, वर्णपरिवर्तन की उलझनें, अस्पृश्यता और हिन्दू समाज, वर्ण-व्यवस्था में सहयोग शक्ति, वर्ण-प्रधान ग्राम्य-सभ्यता, वर्ण और आश्रम के संयुक्त व्यवहार, भारतीय कौटुम्बिक व्यवस्था, संयुक्त परिवार और सामाजिक जीवन, संयुक्त व्यवस्था और सामाजिक उत्तरदायित्व, कौटुम्बिक व्यवस्था और समाज की गति हीनता, कौटुम्बिक व्यवस्था केवल कर्तव्य विधान है, कार्य और कार्य क्षेत्र । ४५–८३ १२५–१६

(र) बेकारी—आर्थिक निर्माण का उत्तरदायित्व, जीवन संघर्ष

धारा पृष्ठ

की समस्या, मूल कारण, मशीन, 'निःकल' स्वावलम्बन, वर्षा पद्धति, कार्यों का शुद्ध रूप, बेकारी का कारण, सरकारी आय-व्यय, गैर-सरकारी आयात, साम्पत्तिक चक्र और बेकारी, चर्खात्मक मार्ग, कच्चे माल का निर्यात, स्वदेशी ढंग, सरकार और सामाजिक उत्पादन । ८४–९४ १५७–१६८

(ल) सम्पत्ति और स्वाम्य—स्वाम्य से ही सम्पत्ति, अपनत्व की असीम लीला, वैयक्तिक और सामूहिक स्वाम्य का नग्न चित्र, साम्पत्तिक क्षय, वैयक्तिक या सामूहिक स्वाम्य ? व्यक्तियों के कार्य से सम्पत्ति का उदय, श्रमिक और मुफ्त खोर, साम्पत्तिक स्वाम्य का विभेदात्मक विवेचन, चर्खात्मक उत्पादन में सम्पत्ति की गुणात्मक वृद्धि, प्रत्येक व्यक्ति की स्वच्छंदता का सीमत होना आवश्यक, संयुक्त परिवार के लिए संयुक्त सम्पत्ति, ब्रिटिश कानून और संयुक्त सम्पत्ति, संयुक्त स्वाम्य और समाज की साम्पत्तिक व्यवस्था, पारिवारिक सम्पत्ति को अविभाज्य होना चाहिये, व्यक्ति तथा चल और अचल सम्पत्ति, साम्पत्तिक स्वाम्य का वर्गीकरण, स्वाम्य सूत्रों का विभाजन, सम्पत्ति पर व्यक्ति का नैसर्गिक अधिकार व्यक्ति और समाज अन्योन्याश्रित हैं, सम्पत्ति का स्वामी कौन है ? पारिवारिक अचल सम्पत्ति की अविभाज्य आवश्यकता, वैयक्तिक बचत और उत्तराधिकार, वैयक्तिक बचत का स्वाम्यांतर, साधन युक्त और कार्य शील व्यक्ति, अनुत्पादक प्राणियों की सृष्टि, "अतिरिक्त आय" और समाज। ९५–१२० १६८–१९४

(व) विनिमय और माध्यम—विनिमय एक अनिवार्य आवश्यकता, विनिमय माध्यम की सृष्टि "स्वतंत्र" और "स्वगामी" माध्यम, दलाल, सिक्कों पर सरकारी आधिपत्य, विनिमय माध्यम का वर्तमान स्वरूप और पारिणामिक विषमता, 'मांग और पूर्ति' का नियम, सिक्के और जीवनाश्यकता, वर्तमान मुद्रा-विधान और विनिमय-माध्यम का अप्राकृतिक आधार, पारस्परिक अदल-बदल, मुद्रा की व्यापकता, साम्पत्तिक पेचदिगी के साथ माध्यम की जटिलता, माध्यम

धारा पृष्ठ

में स्थायित्व की आवश्यकता, आर्थिक रोगों का मूल, सिक्के और सरकारी सुदृढ़ता, परिवर्तनीय परिस्थितियों की नयी परेशानियाँ, मुद्रा ही सर्व व्यापी क्रय-शक्ति है, मुद्रा का रूपक अस्तित्व और सरकारी अपेक्षा, हुण्डियां, विनिमय की विषमता, प्रजात्मक सहयोगी बैंक, बैदेशिक व्यापार। १२५–१४३ १६४–२१५

विशेष टिप्पणियाँ। २१७–२२८

शब्द-सूची। २२६—